# वर्ग संघर्ष या वर्ग समन्वय

प्रवृत्ति के आधार पर दुनियां में दो ही वर्ग होते है– 1. शरीफ 2. बदमाश। प्राचीन समय में इन्हें देव और असुर के नाम से जानते थे, जो बाद में मनुष्य और राक्षस तथा बाद में सामाजिक और समाज विरोधी के नाम से कहे जाने लगे। इन दोनों के बीच निरंतर संघर्ष चलता रहा है और चलता रहेगा। न कोई अंतिम रुप से जीत सकता है, और न कोई अंतिम रुप से समाप्त होता है। शरीफ लोग अपनी व्यवस्था के लिए वर्ण, जाति, धर्म, आदि में आंतरिक विभाजन करते रहते हैं। दूसरी ओर बदमाश अपने को चोर, डाकू, बलात्कारी, हिंसक, आतंकवादी के नाम से मानते हैं। दोनों वर्गो की अलग–अलग पहचान होती है और अलग–अलग गुण धर्म होते हैं। एक वर्ग का व्यक्ति अपने गुणों में परिवर्तन किये बिना दूसरे वर्ग में शामिल नहीं हो पाता, न ही उसमें उसकी कोई पहचान होती है। शरीफ लोगों के गुट को समूह कहते है और बदमाश लोगो के गुट को गिरोह कहते हैं।

राजनीति का चरित्र होता है कि वह अपने समूह के लोगों को अधिकाधिक स्वतंत्रता देना चाहती है और दूसरे समूह के लोगों को अपनी इच्छानुसार चलाना चाहती है अर्थात् गुलाम बनाकर रखना चाहती है। लोकतंत्र में इसके लिए आवश्यक है कि समाज प्रवृत्ति के आधार पर विभाजित न होकर अन्य आधारों पर इस प्रकार विभाजित हो कि उससे सत्ता को कभी भी चुनौती न मिल सके। इस विभाजन के उद्देश्य से ही राजनीति समाज को अनेक भागों में विभाजित करके उन्हें वर्ग का नाम दे देती है तथा उसे वर्ग विद्वेष, वर्ग संघर्ष तक ले जाती है। यह सारा कार्य सत्ता से जुडे लोग ही करते हैं। क्योंकि इससे समाज को तोड़कर रखने में इनका उद्देश्य पूरा होता रहता है। राजनीति से जुडे लोगों के इस प्रयत्न में बदमाश कहे जाने वाले वर्ग का पूरा–पूरा समर्थन और सहयोग रहता है। क्योंकि बदमाश कहे जाने वाले व्यक्ति राजनीति द्वारा बनाये गये वर्गो में बिना गुणों में बदलाव किये शामिल हो जाया करते है। पुराने जमाने में ऐसे लोगों को ही राक्षस कहा जाता था जो वेश बदलने में माहिर होते थे।

वर्ग संघर्ष के लिए मुख्य रुप से आठ आधारों पर काम चल रहा है–1. धर्म 2. जाति 3. भाषा 4. क्षेत्रीयता 5. उम्र 6. लिंग 7. आर्थिक असमानता 8. उत्पादक उपभोक्ता। इन आठ के अतिरिक्त भी अन्य नये–नये वर्ग बनाने के प्रयास निरंतर किये जा रहे हैं। किन्तु ये आठ आधार ऐसे है जिनमें भारत का प्रत्येक राजनैतिक दल समान रुप से सक्रिय है तथा निरंतर अपनी सक्रियता बढाता जा रहा है। इसका अर्थ हुआ कि कोई भी राजनैतिक दल किसी भी परिस्थिति में न तो वर्ग समन्वय की बात करता है, न किसी शरीफ और बदमाश के बीच वर्ग विद्वेष, वर्ग संघर्ष को बढ़ने देता है। हर राजनैतिक दल समाज में आठो आधारों पर विपरीत ध्रुवीकरण का प्रयास करता है जिससे शरीफ और बदमाश के बीच कोई ध्रुवीकरण न हो सके।

इस वर्ग संघर्ष में हर राजनैतिक दल यह प्रयास करता है कि समाज में न्याय और व्यवस्था के बीच संतुलन कभी न रहे अर्थात् न्याय की मांग इतनी ज्यादा उठती रहे कि व्यवस्था हमेशा कमजोर होती रहे, तथा कमजोर व्यवस्था को मजबूत करने के नाम पर राज्य समाज को गुलाम बनाने के प्रयास करता रहे। मैंने अपने अनुभव से महसूस किया कि वर्ग अस्तित्व हमेशा अपराधियों के लिए एक ढाल या कवच के रुप में सुरक्षा का काम करता है। स्वतंत्रता के बाद भारत में अपराध और अपराधी सशक्तिकरण में सर्वाधिक योगदान वर्ग निर्माण वर्ग विद्वेष और वर्ग संघर्ष का ही पाया जाता है।

यदि वर्तमान राजनैतिक दलों का अलग–अलग ऑकलन करें तो वैसे तो सभी इस कार्य में समान रुप से आठो आधारों के विस्तार में शामिल हैं। किन्तु इनमें भी वामपंथी, साम्यवादी समूह सबसे ऊपर पाया जाता है। दुनियां में प्रतिस्पर्धारत चार संस्कृतियों में से हिन्दू संस्कृति के लोग विचार मंथन को अधिक महत्व देते है, तो मुस्लिम या संघ संस्कृति के लोग शक्ति प्रयोग को, इसाई या पाश्चात्य संस्कृति के लोग धन तथा वामपंथ साम्यवादी, संस्कृति के लोग सिद्धांत रुप से वर्ग संघर्ष को ही मुख्य आधार बनाकर चलते है।

भारतीय जनता पार्टी मुख्य रुप से धर्म के आधार पर ध्रुवीकरण करती है। जे.डी.यू मुलायम सिंह, शिवसेना, लालू प्रसाद आदि मुख्य रुप से जाति पर ध्रुवीकरण कराते हैं। दक्षिण भारत के लोग भाषा को मुख्य आधार मानते हैं। किन्तु सभी वामपंथी साम्यवादी संस्कृति से जुड़े लोगों के विषय में यह नहीं कहा जा सकता कि वे वर्ग संघर्ष के लिए किस आधार को महत्वपूर्ण मानते हैं। कभी वे महिला–पुरुष के रुप में विभाजित होते है तो कभी सवर्ण–अवर्ण आदिवासी के रुप में तो कभी गरीब–अमीर के रुप में भी। सब जानते है कि साम्यवाद, धर्म, जाति, परिवार, समाज व्यवस्था को बिल्कुल नहीं मानता। यहाँ तक कि स्त्री–पुरुष के बीच व्यक्तिगत संबंधो में साम्यवाद किसी प्रकार की कोई नैतिकता को स्वीकार नहीं करता। किन्तु जब समाज में वर्ग संघर्ष कराने की बात आती है तो साम्यवाद दुर्गा और महिषासुर को भी मानना शुरु कर देता है। इसी तरह जब महिला–पुरुष के बीच संबंधो में

नैतिकता की बात आती है तो साम्यवाद अपने आंतरिक संबंधों में किसी प्रकार की नैतिकता का महत्व न मानते हुए भी शेष समाज में नैतिकता का उच्चतम मापदण्ड स्थापित करना चाहता है। मैंने पूर्व में भी लिखा है और फिर लिख रहा हूँ कि साम्यवाद दुनियां का अकेला ऐसा संगठन है जिसमें सबसे अधिक पढ़े लिखे बुद्धिजीवी चालाक या धूर्त पाये जाते हैं। दूसरी ओर संघ परिवार या इस्लाम में ठीक इसके विपरीत भावना प्रधान लोगों की बहुलता रहती है। वर्ग संघर्ष कराने वाले शेष सबको किसी न किसी रुप में आपस में लड़ा कर अपने को सुरक्षित रखते हैं, तथा शेष सब लोग आपस में तक दूसरे से लड़ते भिड़ते रहते है।

वर्ग संघर्ष कराने वाले निरंतर कुछ मुद्दे उठाते रहते हैं— 1. समाज में जो लोग कमजोर वर्ग के हैं उन्हें कानूनी अधिकार मिलना चाहिए। 2. कमजोर वर्ग के लोगों को कानूनी संरक्षण मिलना चाहिए। 3 कमजोर व्यक्ति नहीं होता है बल्कि वर्ग होता है और वर्ग के आधार पर अधिकार दिया जाना चाहिए। 4. यदि व्यवस्था उनकी सुरक्षा न कर सके तो उन्हें दूसरे वर्ग से बलपूर्वक अपनी सुरक्षा करने का अधिकार है और उन्हें ऐसा करना चाहिए। जबकि सच्चाई यह है कि व्यक्ति कमजोर होता है वर्ग नहीं। कमजोरों को सुविधा या सहायता देना मजबूतों या सरकार का स्वैच्छिक कर्तव्य है, कमजोरों का अधिकार नहीं। कानून को भी इस मामले में कोई हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। कानून कमजोर व्यक्तियों की मदद कर सकता है सुविधा दे सकता है किन्तु अधिकार नहीं दे सकता क्योकि अधिकार तो प्रत्येक व्यक्ति के समान ही होते हैं जो समान रुप से संविधान द्वारा दिये हुए भी है। किसी के अधिकार किसी भी परिस्थिति में कम या ज्यादा नहीं किये जा सकते और यदि ऐसा प्रयास किया जाता है तो वह हानिकारक ही होगा लाभदायक नहीं।

यह स्पष्ट है कि हमें वर्ग निर्माण, वर्ग विद्वेष, वर्ग संघर्ष से मुक्ति पानी ही होगी। किन्तु यह बात भी सच है कि वर्ग संघर्ष से लाभ उठाने वाले इतने अधिक शक्तिशाली हैं कि दिये और तुफान से तुलना की जा सकती है। सारे कानून बनाने वाले उसमें शामिल हैं यहाँ तक कि न्यायपालिका और कार्यपालिका भी इस प्रचार से प्रभावित हैं। ऐसी परिस्थिति में वर्ग समन्वय को मजबूत करने के लिए हमें योजना पूर्वक काम करना होगा और ये दो मार्ग हो सकते हैं 1. वर्ग समन्वय का प्रचार करें। 2. वर्ग संघर्ष वर्ग निर्माण का विरोध करें। 1. हम वर्ग निर्माण के किसी भी प्लान से अपने को पूरी तरह दूर रखें। महिला सशक्तिकरण, युवा, आदिवासी, हरिजन, सशक्तिकरण हिन्दू और गरीब के सशक्तिकरण के नारे हमें तोडने के लिए और वर्ग समन्वय को कमजोर करने के लिए ही लगाये जाते है। यहाँ तक कि अच्छे—अच्छे लोग भी ऐसे आकर्षक नारों के साथ हो जाते हैं। हम इनसे बचें। 2. वर्ग संघर्ष का विरोध सबके साथ एक साथ नहीं किया जा सकता क्योंकि वर्ग संघर्ष में भी एक वर्ग धुर्त है, बुद्धिजीवी है, तो दूसरा भावना प्रधान। एक वर्ग मोटिवेटर है, नचाता है, सबका उपयोग करता है, तो दूसरा वर्ग मोटीवेटेड है, नाचता है, उपयोग में आता है। मैं जानता हॅ कि इस दूसरे वर्ग को समझाना बहुत टेढा काम है। किन्तु इसके अतिरिक्त हमारे पास कोई अन्य मार्ग भी तो नहीं है। हम चाहे कितना भी चाहे तो संघ परिवार या मुस्लिम समुदाय के अच्छे लोगों को भी यह बात नहीं समझा सकते कि इस संकट काल में हिन्दू—मुस्लिम समस्या की अपेक्षा साम्यवाद सबसे ज्यादा खतरनाक पक्ष है। फिर भी कोई अन्य मार्ग नहीं होने से हमें यह बात धीरे—धीरे समझानी ही होगी कि योजनापूर्वक वर्ग संघर्ष का विस्तार करने वालो को वर्ग समन्वय की दिशा में मजबूर करना ही एकमात्र मार्ग है। मैं जानता हूँ कि जो लोग सोच समझकर वर्ग संघर्ष को हथियार के रुप में प्रयोग कर रहे है वे न कभी स्वयं समझेंगे न दूसरो को समझने देंगे। ऐसी स्थिति में हम यदि नासमझों को थोडा भी समझाने में सफल हुए तो वर्ग संघर्ष, वर्ग समन्वय में बदल सकता है। मैं चाहता हूँ कुछ लोग तो वर्ग निर्माण वर्ग विद्वेष, वर्ग संघर्ष के विरुद्ध वर्ग समन्वय के पक्ष में खडे हों। अंत में मैं यह स्पष्ट कर दूँ कि शरीफ और बदमाश की लड़ाई में शरीफ कमजोरीकरण का वर्ग संघर्ष एक मजबूत हथियार है और हमें बदमाशों को कमजोर करने के लिए उन्हें इस हथियार से वंचित करने की पहल करनी चाहिए।

## भारत में नक्सलवाद, एक समीक्षा

तानाशाही, लोकतंत्र और लोकस्वराज्य बिल्कुल अलग—अलग प्रणालियॉ होती हैं। लोकतंत्र एक ऐसी प्रणाली है जो जीवन पद्धति में न आकर शासन पद्धति तक सीमित हो जाती है। तब उसका परिणाम होता है अव्यवस्था, और उसका समाधान होता है तानाशाही। इसीलिए तानाशाही का सबसे अच्छा मार्ग लोकस्वराज्य ही माना जाता है।

विचारक और सत्तालोलुप बिल्कुल भिन्न—भिन्न होते हैं। विचारक जिस कार्य को मार्ग मानता है उसे सत्ता लोलुप लक्ष्य मान लेता है। मार्क्स का लक्ष्य था शासन मुक्त व्यवस्था, और मार्ग था केन्द्रीत शासन। मार्क्स के बाद स्टैलिन या माओ ने सत्ता को लक्ष्य बना लिया और तानाशाही को मार्ग। मार्क्सवाद का प्रभाव भारत पर भी प्रारंभ

हुआ। पंडित नेहरु मार्क्सवाद से प्रभावित थे। किन्तु जब उसके बाद भी अमीर और गरीब के बीच खाई बढ़ती चली गई तो चारु मजूमदार कानू सान्याल आदि ने इस समस्या से निपटने के लिए नक्सलवाद का मार्ग चुना। चारु मजुमदार जेल में मर गये और कानू सान्याल ने अपने जीवन काल में ही देखा कि नक्सलवाद को मार्ग समझकर बढ़ने वालों ने सत्ता को ही अपना लक्ष्य बनाना शुरु कर दिया है तो उन्होंने भरसक विरोध किया और जब उनके विरोध को सत्तालोलुप नक्सलवादियों ने अनसुना कर दिया तो कानू सान्याल ने निराश होकर आत्महत्या कर ली। मैं स्पष्ट हूँ कि यदि मार्क्स भी जीवित होते और रुस जीन की हालत प्रत्यक्ष देखते तो कानू सान्याल का मार्ग ही अपनाते।

संगठन में शक्ति होती है। संगठन जब सत्ता के साथ तालमेल करता है तो उसमें आपसी टकराव भी पैदा होते हैं। संगठन आमतौर पर उग्रवाद की दिशा में बढ़ता है और धीरे–धीरे उसी में से एक छोटा समूह आतंकवाद की तरफ बढ़ जाता है। यह आतंकवाद ही उस उग्रवादी संगठन के समापन का कारण बनता है। भारत में तीन उग्रवादी विचारों के संगठन माने जाते हैं–1. संघ परिवार 2. संगठित इस्लाम 3. साम्यवाद। इन तीनों के ही अतिवादी लोगो में आतंकवाद की दिशा पकड़ी। संघ के कुछ लोग अभिनव भारत की दिशा में गये। इस्लाम के कुछ लोग आतंकवाद की दिशा में गये, तथा साम्यवादियों में से एक गुट नक्सलवाद की दिशा में बढ़ा। स्पष्ट है कि नक्सलवाद ही साम्यवाद के समापन का कारण बन रहा है। आतंकवादी इस्लामिक गुट भी धीरे–धीरे समाज से दूर होते जा रहे है, और यदि प्रारंभिक चरण में ही प्रज्ञापुरोहित के आधार पर संघ परिवार को झटका नहीं लगता तो वह भी उसी समापन की दिशा में आगे बढ़ जाता।

भारत में नक्सलवाद आया और लगातार बढ़ता गया। बढ़ते–बढ़ते उसने छत्तीसगढ़ के सुदूर दक्षिण भाग बस्तर में अपनी सरकार तक बना ली। नक्सलवादियों की भारत में यह पहली सरकार थी। मैं स्पष्ट कर दूँ कि छत्तीसगढ़ में नक्सलवाद के विस्तार में दिग्विजय सिंह जी की बहुत भूमिका रही है। दक्षिण छत्तीसगढ़ में दिग्विजय सिंह जी के गुरु ब्रम्हदेव जी शर्मा व्यवस्था परिवर्तन की दिशा में लगातार वातावरण बना रहे थे। दूसरी ओर सुदूर उत्तर छत्तीसगढ़ के रामानुजगंज जिले में मैं व्यवस्था परिवर्तन का वातावरण बना रहा था। ब्रम्हदेव शर्मा आदिवासी सशक्तिकरण के नाम पर काम कर रहे थे, जो वर्ग संघर्ष का विस्तार कर रहा था। मैं लोकस्वराज्य पर काम कर रहा था, जो वर्ग समन्वय को आगे बढ़ा रहा था। 1995 तक मैं भी समझता था कि नक्सलवाद व्यवस्था परिवर्तन का मार्ग है भलें ही वह हिंसक होने के कारण गलत मार्ग है। मैंने अपने जिले में ब्रम्हदेव जी शर्मा के मार्ग को अस्वीकार करके वर्ग समन्वय की दिशा पकड़ी, तो तत्कालीन मुख्य मंत्री दिग्विजय सिंह जी ने मुझे नक्सलवादी घोषित करा दिया क्योंकि मैं भी उसी तरह व्यवस्था परिवर्तन का पक्षधर था जिस तरह ब्रम्हदेव शर्मा। सन् 2000 में रामानुजगंज जिले में तूफान की गति से नक्सलवाद आया, मेरा भी उनसे निकट का परिचय रहा। किन्तु उनके आने के बाद मेरा उनसे संवाद हुआ और मैंने उनसे बार–बार पूछा कि यदि नक्सलवाद आया तो भारत का संविधान कैसा होगा तो वे इसका कोई उत्तर कभी नहीं दिये। बल्कि मुझे यह विश्वास होने लगा कि नक्सलवाद व्यवस्था परिवर्तन नहीं है, सिर्फ सत्ता संघर्ष है, तो मेरा भ्रम टूट गया। मैं स्पष्ट कर दूँ कि रामानुजगंज शहर में जहॉ मेरा घर है उस घर से सिर्फ दो–तीन फर्लाग दूरी पर ही नक्सलवादियों का निवास था। मुझे अपनी भूल महसूस हुई और परिणाम हुआ कि रामानुजगंज क्षेत्र को नक्सलवादियों से नक्सलवादी तरीके से ही मुक्त करा लिया गया। आज यह गर्व से कहा जा सकता है कि रामानुजगंज भारत का पहला स्थान हुआ जहॉ नक्सलवाद तूफान की गति से आया और तूफानी गति से ही वापस चला गया।

भारत की राजनैतिक स्थिति दो वर्ष पूर्व बदली। दो वर्ष पहले कांग्रेस शासन में दिग्विजय सिंह, अजित जोगी सरीखे नक्सलवाद समर्थक लोग महत्वपूर्ण पदों पर थे। अब ऐसे लोग किनारे हो गये। दो वर्ष में ही दक्षिणी भाग जो नक्सलवाद की पहली सरकार के रुप में विख्यात था वहीं अब भारत से नक्सलवाद के समापन की शुरुवात कर रहा है। नरेन्द्र मोदी सरकार की दो वर्षो की यह सबसे बड़ी उपलब्धि है कि भारत नक्सलवाद से मुक्त होने जा रहा है। नक्सलवादियों के प्रमुख सहायक अग्निवेश, दिग्विजय सिंह, अजित जोगी सरीखे लोग अलग–थलग पड़ते जा रहे हैं। ब्रम्हदेव शर्मा, प्रशांत भूषण सरीखे लोग इस भ्रम में रहे कि नक्सलवाद व्यवस्था परिवर्तन का मार्ग है, सत्ता संघर्ष नहीं। ब्रम्हदेव शर्मा की मृत्यु हो गई और प्रशांत भूषण भी अरविंद जी से अलग होकर कमजोर हो गये। मुझे पूरा विश्वास है कि प्रशांत भूषण सरीखे लोगों का भी भ्रम उसी तरह दूर होगा जिस तरह मेरा हुआ। मैं जानता हूँ कि स्वामी अग्निवेश को बस्तर में गैर कानूनी तरीके से पीटा गया। स्वामी अग्निवेश आर्य समाज में प्रमुख स्थान पर है। और इस आधार पर एक आर्य समाजी होने के कारण मैं उन्हें सम्मान देता हूँ किन्तु बस्तर में उनकी गैर कानूनी पिटाई का मैंने भी खुलकर समर्थन किया क्योंकि उनके सारे क्रियाकलाप आर्य समाज की नीतियों के विपरीत दिखते

रहे। अब तो स्थिति यह आ गई है कि सोनी सौरी सरीखे नक्सलवाद समर्थक भी बस्तर छोड़कर दिल्ली जाने का प्रयास कर रहे हैं।

जे.एन.यू. भी नक्सलवादियों की विचारधारा का महत्वपूर्ण केन्द्र रहा है। नक्सलवादी गतिविधियॉ भले ही वहॉ से न संचालित होती हों किन्तु नक्सलवादी विचारधारा तो वही से फलती फूलती थी। अधिकांश वामपंथी वहीं से निकले। ऐसी ही विचारधारा के पोषक भारतीय राजनीति की विधायिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका तक के ऊंचे ऊंचे पदों पर स्थापित हो गये या कर दिये गये। इन तीनों लोकतांत्रिक संस्थाओं के उच्च पदों पर बैठे लोग जिस बात को भारतीय संस्कृति कह दिया करते थे वहीं संस्कृति मान ली जाती थी। अब स्थितियॉ बदली। जे.एन.यू. की घटना ने पूरे देश को एक बारगी सतर्क कर दिया। इस तरह नक्सलवाद छत्तीसगढ़ के बस्तर से भी समाप्त होने की शुरुवात कर चुका है, तो जे.एन.यू. की नारेबाजी की घटना ने उस वैचारिक केन्द्र को भी कटघरे में खड़ा कर दिया है। मैं स्पष्ट हूॅ कि अब अधिक समय नहीं लगेगा जब भारत अपने को इस नक्सलवाद की बीमारी से मुक्त घोषित कर सकेगा।

## संघ और साम्यवाद

मैंने एक दो बार लिखा कि दुनियां में वामपंथियों में सबसे अधिक बुद्धिप्रधान विद्वान और चालाक लोग होते हैं दूसरी ओर इस्लाम और संघ परिवार में बहुत अधिक भावना प्रधान शरीफ लोग होते है। चालाक लोग आगे चलने में सिद्धहस्त होते है तो भावना प्रधान लोग अनुकरण करने में। एक सर्वमान्य सिद्धांत है कि शराफत के कंधे पर चढ़कर ही धुर्तता प्रगति किया करती है। यह भी एक सिद्धांत है कि चालाकी सीमा से आगे बढ़ती है तो धुर्तता में बदल जाती है और शराफत सीमा से आगे बढ़कर मुर्खता में बदल जाती है। धूर्त लोग मूर्ख लोग को पटाकर रखते है और मूर्ख लोग धूर्तो के झांसे में आकर उनके अनुसार काम करते रहते है। संघ परिवार और मुसलमान आपस में लड़ते रहें यह वामपंथियों के लिए बहुत लाभदायक होता है।

पिछले दिनों संघ परिवार ने तीन महत्वपूर्ण पहल की। 1. संघ परिवार ने एक बहुत अच्छा बयान देकर सम्पन्न लोगों को आरक्षण छोड़ने की सलाह दी। पिछली बार भागवत जी का आरक्षण संबंधी बयान विवादों में घिर गया था। इस बार उनका बयान बहुत ही ठीक तरीके से आया है। उनका बयान पिछली बार भारतीय जनता पार्टी को संकट में डाल रहा था और इस बार का बयान विरोधियों को संकट में डालेगा।

जे.एन.यू. की घटना संघ परिवार को ठीक दिशा में ले जा रही थी। टकराव वामपंथियों और उग्रवादी मुसलमानों के गठजोड से था। जिसमें वामपंथी सीधे–सीधे निशाने पर थे। वामपंथियों ने बहुत चालाकी से राजस्थान में मुसलमानों की एक सभा करा दी और उस सभा में कांग्रेस नेता गुलामनबी आजाद ने संघ परिवार की तुलना आई.एस.आई.एस. नामक कुख्यात इस्लामिक आतंकवादी संगठन से कर दी। तीर ठीक निशाने पर बैठा और संघ परिवार जे.एन.यू. घटना को किनारे करके फिर से इस प्रकरण को उछालने लगा। फिर से भारत माता की जय और वन्देमातरम् गाना होगा जैसे नारे उछाले जाने लगे। फिर से शिवसेना, कैलाश विजय वर्गीय, योगी आदित्यनाथ, साध्वी सरीखे लोग भारत माता और वन्देमातरम् के पक्ष में आवाज लगाना शुरु कर दिये। एक टी.बी. प्रसारण में मैंने विख्यात संतुलित विचारक राकेश सिन्हा और असंतुलित वक्ता ओबैसी के बीच बहस सुनी। मुझे दुख हुआ जब राकेश सिन्हा पूरी तरह ओबैसी की चालाकी में फंसकर अनाप सनाप बोले जा रहे थे। ओबैसी बार–बार कह रहे थे कि मैं किसी दबाव में आकर भारत माता की जय नही बोलॅूगा भले ही मेरी गर्दन कट जाये। राकेश जी को यह कहना चाहिए था कि भागवत जी ने सिर्फ सलाह दी है, न कि कोई दबाब है किन्तु वे बार–बार बोलते रहे कि आपको भारत माता की जय बोलना होगा। यहॉ तक कि चालाक ओबैसी ने यह तक कह दिया कि में हिन्दुस्तान जिंदाबाद बोल दॅूगा मादरेवतन हिन्दूस्तान बोल दॅूगा लेकिन भारत माता की जय नहीं बोलॅूगा। क्योंकि उसके लिए ऊपर से दबाव देकर मुझे बाध्य किया जा रहा है। में स्वतंत्र हॅू कि मैं हिन्दी में बोलू या उर्दू में। इतना स्पष्ट होने के बाद भी राकेश सिन्हा यह नही समझ सके कि वे ओबैसी जी के जाल में फॅसते जा रहे है और वे अनावश्यक दबाब डालते रहे और अंत में समापन के समय राकेश जी ने यह कहा कि आपको बोलना ही होगा और ओबैसी जी ने अंत में यह कहॉ कि में नहीं बोलॅूगा।

मैं समझता हॅू कि संघ परिवार से भारत को बहुत आशाये है। उन्हें कभी वामपंथियों के मुहरे के रुप में उपयोग नहीं होना चाहिए। भारत के वामपंथी लगातार प्रयत्न करते है कि भारत और पाकिस्तान या हिन्दू और मुसलमान के बीच निरंतर टकराव जारी रहे, जिससे चीन और वामपंथ भारत में सुरक्षित अपना खेल खेलते रहे। मेरा सुझाव है कि संघ परिवार तथा शांतिप्रिय मुसलमानो के प्रमुख लोगों को कुछ अधिक अकल का उपयोग करना चाहिए।

## प्रश्नोत्तर

### 1 शिवदत्त बाघा, बांदा, उ0प्र0, ज्ञानतत्व कमांक–174080

प्रश्नः–यावतभ्रियते जठरम् तावत स्वत्वांम हि देहिनाम। वैदिक व्यवस्था का यह आर्थिक चिंतन है। मानवीय पक्ष का अर्थतंत्र है, मतलब आर्थिक व्यवस्था का यह मानवीय चेहरा है। इससे बिलग अर्थव्यवस्था के नाम पर जो कुछ भी है वह लूट और शोषण के लिए है, अमानवीय है। पूँजी लगाओ, पूँजी बढाओ, मुनाफा बटोरो और अपने आर्थिक साम्राज्य खड़े करो। अन्य को अपना कृपा भाजन बनाओ, उनके तन के मन के मालिक बनो। इस प्रकार के सारे उपद्रव मानव समाज के बीच मुनाफा बटोर अर्थशास्त्र ने खड़े किये। कहने की जरुरत नहीं कि सारी विचार धाराओं व चिंतन का केन्द्र बिन्दु मुद्रा बन गयी। पृथ्वी में उपलब्ध संसाधनों एवं मुद्रा का नियमन किस प्रकार हो इसे लेकर पूँजीवाद से लेकर मार्क्सवाद, लेनिनवाद, माओवाद, समाजवाद और अब आतंकवाद जैसी तमाम विचार धाराएँ फूट निकली। दुनियां में सारा खेल धन का है, वैभव का है, ऐश्वर्य का है, अधिकारों का है। भले इस खेल में लेबल धर्म का लगाया जाये या राजनीति का। आखिर इस जगत में ऐसी चेष्टाएं क्यों होनी चाहिये कि कोई स्वामी हो और कोई दास। विचारक खलील जिब्रान का वचन है कि महान वह है जो किसी का शासन स्वीकार नहीं करते और किसी पर शासन करने की भी चेष्टा नहीं करते। आपका व्यवस्थापक का विचार महान चिंतक जिब्रान की मंशा की तरफ बढ़ा हुआ पहला कदम है। क्या हम मुद्रा मुक्त, शोषण मुक्त, हिंसा मुक्त, स्व अनुशासित समाज निर्माण की दिशा में नहीं बढ़ सकते? क्या यह असम्भव है? क्या जिब्रान का चिंतन हवा हवाई है और क्या वेद की अर्थनीति भी अव्यावहारिक है।

तब क्या लूट खसोट वाला अर्थशास्त्र ही व्यावहारिक है इस धरती के लिए जिसने सारी धरती में मुद्रा राक्षसों, नकली इंसानों की जमातें पैदा कर दिया। नकली घी, नकली दूध, नकली सामान, शिक्षा की डिग्री नकली और अब आदमी भी नकली तथा उसके द्वारा संचालित व्यवस्था भी नकली। तभी तो संविधान की हलफ उठाकर तथा ईश्वर की सौगंघ खाकर भी राष्ट्रविरोधी कार्य हो रहे हैं। ऊंचे पदों पर बैठकर घोटाले व काली कमाई चल रही है। राजनीतिक दल धन लेकर चुनावों में प्रत्याशी उतार रहे हैं और प्रत्याशी धन देकर वोट खरीद रहे हैं। अब लोकतंत्र के नाम पर चुनाव से बड़ा तमाशा व नकलीपन और क्या हो सकता हैं? कुछ दिन पहले यूपी में सम्पन्न हुए त्रिस्तरीय पंचायती चुनावों का संदर्भ लेकर हिन्दी के अखबार दैनिक जागरण के डी.एन.ई. भी मनीष जी ने एक लोकतांत्रिक मजाक शीर्षक से लेख लिखा। जिसमें उन्होंने चुनावों के नाम पर लोकतंत्र के चीर हरण का स्पष्ट ब्यौरा दिया। नरसिंहाराव सरकार मनमोहन सिंह सरकार के समय संसद में नोट फार वोट के चर्चे गूंजे। सारे देश ने सुना। इस देश की संवैधानिक संस्थानों ने भी सुना पर दुर्योधन की सत्ता में जी रहे सारे लोग खामोशी अख्तियार किए दुशासन द्वारा लोकतंत्र के इस चीरहरण को बराबर से देखते आ रहे हैं। धन लेकर प्रत्याशी उतारे जाएंगे, जाति धर्म के नाम पर प्रत्याशी खड़े किए जायेंगे। फिर उन से आशा की जाये कि वे कुर्सी पर बैठकर हरिशचन्द्र की भूमिका का निर्वाह करें और बिना भेद भाव सब को समान दृष्टि से देखे, न्याय दें, यह सब किस प्रकार सम्भव है। व्यवस्था के नाम पर इससे बड़ा नाटक नकली पन और क्या हो सकता है। व्यवस्था के इस नकली खेल से कोई भी अलग नहीं है पर देश का मतदाता मजबूर है, लाचार है, अपनी गरीबी को लेकर खैरात व आरक्षण पाने को लेकर, जातीय साम्प्रदायिक नजरिए को लेकर। हम सब में कोई भी निष्पक्ष नहीं। हमारी सब की अपनी–अपनी मजबूरियाँ है और इन्ही मजबूरियों ने हम सब को मुखौटों वाला नकली इन्सान बना दिया। यह रुप धरा हमने सिर्फ धन के लिए पद के लिए। अब इस स्थिति से हम निकलने वाले नहीं हैं। हम का अर्थ सारे संसार से है। पाकिस्तान अमेरिका से एफ 96 विमान पाकर और अधिक नरसंहार करेगा किन्तु युद्धक सामग्री बेचकर अमेरिका को मुद्रा चाहिए और सारी दुनियां में अपनी दादागीरी का डंका भी। हम कतई मानवीय नहीं है। हमारा यह अमानवीय चेहरा सामने आ भी जाये तो हमें कोई फर्क नहीं पड़ता क्योंकि हमारा कोई कुछ बिगाड़ भी तो नहीं सकता। यह भाव ऊपर से लेकर नीचे तक है। तभी घोटाले में सजायाफता लालू राजनीति में बराबर जमे है। लूट खसोट कमीशन खोरी के इल्जामों से घिरे मायावती मुलायम यूपी की राजनीति की धुरी बने हैं। सरकारी धन लूटने वाले यदि जेल से बाहर आने पर फूल मालाओं से लादे जाते है तो कोई आश्चर्य नहीं होता।

भारत सरकार के वित्त राज्यमंत्री ने एक लेख में सरकार की भूमिका को लेकर स्पष्ट किया था कि उसे रेफरी की भूमिका में होना चाहिए। खेल का मैदान, खेल का सामान और खिलाड़ी में सरकार की कोई भूमिका नहीं होनी चाहिए। सरकार को सिर्फ देखना है कि खेल नियमों के अनुसार चले। पर जब सरकार सर्वे सर्वा की भूमिका में हो जाती है तो काम की पारदर्शिता खत्म और हर तरह की गड़बड़ शुरु हो जाती है। भारत का लोकतंत्र हर लिहाज

से विकृत हो चुका है और अब वह सड़ रहा है। वह अब चल नहीं रहा बल्कि घिसट रहा है। नित नए कारनामें सामने आते है। अभी बांदा हमीरपुर विधान परिषद चुनाव में भाजपा प्रत्याशी ने पार्टी की मर्जी के विपरीत अपना पर्चा वापस लेकर सपा प्रत्याशी का निर्विरोध निर्वाचन सुनिश्चित कर दिया और भाजपा को पटकनी दे दिया, मैंच फिक्सिंग की तरह। यह व्यावहारिक राजनीति की बानगी ठहरी।

**उत्तर**:–ऐसा लगता है कि आपने लूट और शोषण का अंतर नहीं समझा। लूट किसी की इच्छा के विरुद्ध होती हैं तथा बलप्रयोग आवश्यक है, जबकि शोषण सहमति से होता है, बिना किसी प्रकार के बलप्रयोग के होता है। शोषण कभी अपराध नहीं होता, सिर्फ अनैतिक होता है। जबकि लूट अपराध होता है। शोषण रोकना समाज या सरकार का दायित्व नहीं होता, मात्र स्वैच्छिक कर्तव्य होता है जबकि लूट रोकना समाज और सरकार का दायित्व होता है। लूट रोकना सरकार की सर्वोच्य प्रथामिकताओं में एक है जबकि शोषण रोकना लूट सरीखे अपराधों के नियंत्रित होने के स्थिति में ही प्राथमिकता में शामिल किया जा सकता है। लूट और शोषण यदि एक साथ जारी हो तो लूट को रोकना हमारी पहली प्राथमिकता है। यदि हम लूट की जगह शोषण रोकने का प्रयास करते है तो इसका अर्थ है कि हमारी लुटेरो से कोई न कोई मिली भगत है।

इसी तरह आपने प्रतिस्पर्धा और काफिला पद्धति का अंतर नहीं समझा। समानता का अर्थ होता है किसी स्थापित व्यवस्था द्वारा घोषित सीमा रेखा से ऊपर वालों को समान स्वतंत्रता तथा नीचे वाले को समान सुविधा। यदि कोई व्यक्ति किसी आर्थिक सीमा से ऊपर है तो वह स्वतंत्रता का अधिकारी है। दूसरी ओर यदि कोई सीमा रेखा के नीचे है तो उसे काफिला पद्धति के अनुसार सीमा रेखा तक की सुविधा दी जा सकती है। यह सुविधा भी राज्य या समाज का कर्तव्य है सुविधा पाने वाले का अधिकार नहीं। यही कारण है कि सम्पत्ति की अधिकतम सीमा का विचार पूरी तरह अव्यावहारिक माना गया है। एक बात और विचारणीय है कि आर्थिक असमानता को नियंत्रित करने के नाम पर अधिकारों की असीमित असमानता एक गुलाम बनाने का षडयंत्र है। धन का एकत्रीकरण भी घातक है, किन्तु सत्ता का केन्द्रीयकरण उससे भी अधिक घातक है। मायावती जी ने पहले सत्ता पायी तब धन। धन से सत्ता नहीं। वर्तमान समय में धन के केन्द्रीयकरण के विरुद्ध आवाज उठाने वाले लोगों की बाढ़ आयी हुई है और कही न कही ऐसे लोग सत्ता के केन्द्रीयकरण के मामले में चुप हो जाते है। मैं समझता हूँ कि आप इस बात को समझेंगे। क्योंकि आपने स्वयं ही लिखा है कि महान वह है जो न किसी को गुलाम बनाना चाहते हैं और न ही बनने को तैयार हैं। मैं आपको बता दूँ कि व्यवस्थापक के प्रत्येक कार्यक्रम में एक प्रार्थना होती है जो इस प्रकार है– हे प्रभु आप मुझे शक्ति दो, कि मैं दूसरों को अपनी इच्छानुसार संचालित करने की इच्छा अथवा दूसरों की इच्छानुसार संचालित होने की मजबूरी से दूर रह सकूँ। यदि ऐसा न हो तो मैं ऐसे विचारों को सहमत करुँ और फिर भी ऐसा न हो तो मैं ऐसी इच्छाओं का अहिंसक प्रतिरोध करुँ। मेरे विचार में हमें जीब्रान के चिंतन को आगे बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए।

मैं सहमत हूँ कि नकली मिलावटी सामान बेचने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। आपने राजनीति का जो स्तर बताया है वह भी सही है। मैं सहमत हूँ कि लोकतंत्र का चीरहरण हो रहा है, जिसमें सब प्रकार के हथकंडे अपनाये जा रहे है। परन्तु मैं इस बात से सहमत नहीं कि असली और नकली बनाने वाले को एक तराजू पर तौला जाये। यदि कोई नकली सामान बेच रहा है तो उसे मिलावट के जुर्म में जेल में बंद किया जाये। किन्तु यदि कोई असली सामान बेच कर बहुत बड़ा पूँजीपति बन जाता है तो ऐसे व्यक्ति को अधिक से अधिक सम्मानित करने की भी जरुरत है। आपने लिखा कि हम इस स्थिति से निकल नहीं सकेंगे। मैं ऐसी निराशा से अलग हूँ। मैं आश्वस्त हूँ कि हम इस स्थिति से अवश्य निकल सकेंगे। दिया और तूफान के संघर्ष में हमें तूफान के सामने निराश होकर बुझ जाने की अपेक्षा किसी तरह बचने का प्रयास करने की जरुरत है।

आपने वर्तमान परिस्थितियों का वास्तविक चित्रण तो किया है, परन्तु आपने यह नहीं बताया कि इन परिस्थितियों में हमें क्या करना चाहिए? अनेक लोग समाधान के रुप में अपनी सद्इच्छा व्यक्त करते हैं। कई लोग कहते है कि हम सब सुधर जाये तो सब सुधर जायेगा। कई लोग कहते है कि यदि समाज सुधर जाये, व्यक्ति सुधर जाये, सब ईमानदार हो जाये, चरित्र निर्माण हो जाये तो सब सुधर जायेगा। मैं समझता हूँ कि ये दोनों बाते मुझे भी मालूम है और आपको भी मालूम हैं। इन दोनों का विस्तार से वर्णन करना आज की विशेष आवश्यकता नहीं। आज की पहली आवश्यकता यह है कि तुफान के सामने दीपक की लौ कैसे मजबूत हो अर्थात् हम स्वयं दीपक बने या किसी जलते हुए दीपक की लौ को सशक्त करे तभी तूफान का मुकाबला हो सकता है। बाहर से खड़े होकर यह

कहना कि तुफान बहुत मजबूत है, लड़ना असंभव है, ऐसी निराशाजनक प्रस्तुति आप जैसे गम्भीर विचारक के लिए ठीक नहीं।

वित्त राज्यमंत्री ने जो कहा उससे मैं सहमत हूँ। मैं प्रतिक्षा कर रहा हूँ कि हमारे वित्त राज्यमंत्री अपनी कथनी को करनी में बदलने के लिए क्या कर सकते है। मैं उन्हें आश्वस्त करना चाहता हूँ कि यदि उन्होंने ऐसा करने की कोई योजना प्रस्तुत की तो हम सब मिलकर उनका पूरा समर्थन करेंगे। आपने चुनाव में धनबल या शराब के उपयोग की बात लिखी है। यह तो सच्चाई है ही। किन्तु साथ में यह भी सच्चाई है कि चुनाव में डर भय और हिंसा का भी भरपूर उपयोग होता है। जहाँ समाज में एक गुण्डे के भय से कोई रिपोर्ट करने से डरता हो, गवाही देने से डरता हो, वहाँ शराब और धन के माध्यम से वोट लेने की प्रवृत्ति की आलोचना उचित नहीं दिखती। मैंने एक बार मतदान संबंधी प्रश्न के उत्तर में लिखा था कि वोट देने के पहले इन बातों पर विचार करना चाहिए 1. वोट लेने वाला ईमानदार है वोट को समाज की अमानत समझकर उपयोग करेगा। 2. वोट लेने वाला ऐसा है जो समय पढ़ने पर हमारे व्यक्तिगत काम आयेगा। 3. वोट लेने वाला हमारी जाति धर्म व्यवसाय या पड़ोसी या निकट का रिश्तेदार या मित्र है। यदि वोट लेने वाला शुद्ध राजनैतिक व्यवसायी है तथा ऊपर की प्रथमिकताओं में कहीं नहीं उतरता तो हमें वोट देने के पहले तत्काल जो भी मिले वह ले लेने में क्या अनैतिकता है। मैं अपना कीमती वोट किसी व्यापारी को मुफ्त में देने की गलती क्यों करुं। इससे तो अच्छा है कि मैं अपने वोट को समुद्र मे फेंक दूँ। मैं समझता हूँ कि आप मेरी भावना को समझेंगे।

### 2 रविन्द्र पोद्दार, उज्जैन म0प्र0, ज्ञान तत्व कमांक–630059

ज्ञानतत्व 329 पूरा पढा। सहमति बनी। साम, दाम, दंड, भेद का बहुत अच्छा विश्लेषण किया गया है। किन्तु इसके साथ यह भी जुड़ा होना चाहिये कि सत्य और न्याय के मामले मे शत्रु से भी कोई पक्षपात नहीं होना चाहिये। अब यहां प्रश्न उठता है कि सत्य, न्याय, पक्षपात रहित इत्यादि वैदिक शब्दो का निर्णय कैसे हो? साधारण तया विद्वत जन कह देते हैं कि जिसमे अधिक से अधिक मनुष्यो का भला हो, वही सत्य, वही न्याय और वही पक्षपात रहित होगा। परन्तु प्रश्न वाचक चिन्ह तब लगता है कि ऐसी सोच रखने वाला देश भी विभाजन के निर्णय से करोडो पर अत्याचार तथा सबसे बड़े प्रजातान्त्रिक देश मे कट्टर पंथियों द्वार कत्ले आम तथा ढाई लाख हिन्दुओं को कश्मीर से पलायन के लिये मजबूर करना आदि आदि, दुष्कार्यो के प्रति उदासीन कैसे हो सकता है? क्या हमारा संविधान इसे पक्षपात नहीं कहता? क्या तुष्टिकरण का दुनियां में इससे बड़ा उदाहरण मिलता है? गिनीज बुक वाले अपने रिकार्ड खंगाले। अर्जुन ने अन्यायियों के प्रति उदासीन होने का निर्णय लिया तब श्री कृष्ण ने उसे नपुंसक कहा था। मै जानना चाहता हूँ कि ये शब्द और अर्थ का शास्त्र– अर्थात शास्त्रार्थ कहां से आये। उससे पूर्व बता दूं कि बिगडी हुई वस्तु को अथवा उपलब्ध वस्तु को उसके वास्तविक उपयोगी स्वरूप में लाने को संस्कृतिकरण अर्थात विषम से सम अवस्था मे लाने को ही सस्कृति कहते है ।

जो चार संस्कृति आपने बताई ये तो बाद का रूप है। इनकी जड़ में तो पूर्व की वैदिक संस्कृति है जिसका ये विकृत रूप है। चाणक्य सेल्युकस सिकंदर के समय इनमे इतना अंतर नहीं था। महाभारत के समय मे यह अंतर और कम था तथा रामायण काल तक ये सिर्फ दो ही रूप मे थी देव और राक्षस। देव अर्थात वेद के शुद्ध अहिंसक रूप को मानने वाले और दूसरे साक्षरा राक्षसा भवन्ति अर्थात स्वार्थी दोष को नहीं देखता। अपने पोषण के लिये सब कुछ करने के लिये तैयार, अर्थ का अनर्थ करने वाले, वेदो के अभिप्राय को न समझने वाले, मात्र साक्षर लोग ऐसे दो विभाग ही थे। अब भी हैं कम या ज्यादा। वेद क्या है, सभी प्राणियों मे मनुष्य एक मात्र ऐसा है जिसे शिक्षा के बिना कुछ भी विधा नहीं आती है अर्थात गुरू के बिना कुछ नहीं सीख सकता। अत एव आदि काल मे उसकी उत्पत्ति में सहायक परमात्मा ने उसे उपदेश किया जिसे वेद कहते है। वेद अक्षुण है क्योंकि उसमे आज तक कोई बदलाव न तो आया है न आवेगा। इस रीति से साहित्य याने वेद जिसका तात्पर्य विचार, लाभ सत्य मार्ग और ज्ञान का पुंज रूपी परमात्मा का उपदेश है वह मनुष्य के साथ आया। इसलिये शास्त्रार्थो को प्रश्रय मिलना चाहिये। वहां स्वतंत्रता से व्यक्ति अपनी बात रखे उसका प्रकाशन प्रचार प्रसार जनता के समक्ष हो और वह अपना निर्णय स्वयं करे। ऐसा होना चाहिये।

मुक्ति की बात आपने पागलपन से निकालकर नरेन्द्र मोदी और नीतिश कुमार पर छोड दी, परन्तु नीतिश कुमार को अभी बहुत कुछ छोडना भी है और ग्रहण भी करना है और वे उसमे सफल हो पायेगे इसमे संदेह है। कोध द्रोह को छोड़कर वाक्पटुता का होना, राष्ट्र के लिये मान सम्मान का त्याग, क्षुद्र स्वार्थ के लिये स्वाभिमान का

ध्यान न रखना इत्यादि गुण कठिनाई एंव त्याग से प्राप्त होते है। अगर बिहार मे वे एलाइंस को छोड अपनी पार्टी से ही लड़ते और राष्ट्रवादियो से अपनी शर्तो पर समझौता करते तो अच्छा होता। अब तो जो आपने बताया है वही राह है परन्तु उसमे उपरोक्त स्वाभाविक कठिनाइयां है।

आपने कुछ शब्दो के अर्थ पूछे है। मै अपनी जानकारी के अनुसार लिख रहा हूँ।

1 तटस्थ अर्थात जो तट पर ही स्थित हो गया। किसी द्वंद से उसका कोई सारोकार ही नहीं है। नदी में कूदेगा तभी तो द्वंद होगा।

2 निष्पक्ष– दो पक्षो के बीच निर्णय करते समय सही को सही और गलत को गलत कहना जैसे न्यायाधीश किया करता है।

3 निरपेक्ष– किसी विशेष संबंध मे किसी से कोई अपेक्षा न रखना। मसलन पंथ निरपेक्ष अर्थात कोई पंथाई अपने घर अथवा पूजा स्थल मे कैसे उपासना करता है किसकी करता है इससे तब तक कोई सरोकार न रखे जब तक वे पक्षधर बनकर उसके पास कार्यवाही का निवेदन न करे या राजकीय कार्य के बीच बाधक न बने। वैसे इसका तात्पर्य यह भी है कि सत्ता उस पंथाई को उपासना को उपासना गृह आदि के संबंध मे कोई लाभ/हानि न पहुचाएं या जो करे वह सभी पर समान रूप से प्रतिबंधित हो, पक्षपात रहित हो।

4 निर्लिप्त– इसका भाव भी लगभग उपरोक्त सभी मे आ गया। परन्तु यह मानव में सम्भव नहीं है। एक परमात्मा ही सर्वत्र जगत मे व्याप्त होकर जगत को धारण पोषण चलायमान करते हुए प्राणियों के न्याय देते हुए भी निर्लिप्त होकर रहता है। ऐसा व्यवहार मनुष्य के लिये असंभव है परन्तु वह यथा संभव करने का प्रयत्न ही कर सकता है।

वेदो में न तो मूर्ति पूजा है न ही मांसाहार का आदेश है और गौ को अधिन अर्थात न मारने योग्य कहा है और जो मारे उसे शीशे की गोली से मार डाले यह भी कहा है।

जनसंघ से लेकर भाजपा तक का सफर अपने आप में स्पष्ट है। वाजपेयी से लेकर मोदी या शाह तक जो परिवर्तन हुआ है। वह भी महत्वपूर्ण है। यद्यपि यह अत्यंत धीमा है और सही दिशा की ओर इंगित नहीं हो पाया है। परन्तु देश की दिशा बदली है।

युद्ध अवश्यभावी है परन्तु उसका असर कब तक होगा, यह उसकी दशा दिशा तय करती है। राम रावण युद्ध के लाखो वर्ष महाभारत युद्ध के हजारों वर्ष बाद प्रथम विश्व युद्ध तक शान्ति रही। अतः यु.एन.ए.ओ तय करे कि तृतीय विश्व युद्ध के होने के बाद कितने वर्षो तक शान्ति स्थापित हो सकेगी।

उत्तर– आपने शत्रु के साथ भी पक्षपात रहित होने की बात की, तथा भारत पाकिस्तान के विभाजन के समय मुसलमानों द्वारा हिन्दुओं पर किये गये एक पक्षीय अत्याचार की बात की। जबकि सच्चाई यह है कि ये अत्याचार दोनों पक्ष से हुए। मात्रा में पैतीस पैसठ का अंतर हो सकता है। इसका अर्थ हुआ कि आप हिन्दू और मुसलमान के बीच मुसलमानों को शत्रुवत मानते है तभी आपने एक पक्षीय आकड़े दिये। मैं मानता हूँ कि शत्रु के साथ सुरक्षा और न्याय के मामले में विशेष परिस्थिति को छोड़कर सामान्यतया पक्षपात किया जा सकता है। यह अलग बात है कि हम शत्रु और विरोधी के बीच का ठीक–ठीक अंतर समझने की क्षमता रखते हो। मैं यह भी मानता हूँ कि मुसलमान हमारा शत्रु नहीं है।

आपने संस्कृति की परिभाषा की है। मेरे विचार में कोई व्यक्ति बिना विचार किये बार–बार किसी कार्य को करने लगता है वह उसकी आदत बन जाती है। ऐसी आदत यदि लम्बे समय–समय तक चले तो वह उसका संस्कार बन जाता है। ऐसे संस्कार यदि किसी वर्ग विशेष की बहुसंख्या में आ जाये तो उसे उसकी संस्कृति कहते है। भारतीय संस्कृति विचार मंथन प्रधान है तो इस्लामिक संस्कृति संगठन प्रधान। मैं इस परिभाषा से सहमत नही हूँ कि वेदों को मानने वाले देव और न मानने वाले असुर थे। मैं देव और असुर की परिभाष गुणों से मानता हूँ । अर्थात जो व्यक्ति पांच प्रकार के कार्य करने का अभ्यस्त न हो उसे हम देव कह सकते है। वे कर्म है! 1. चोरी, डकैती, लूट 2. बलात्कार 3. मिलावट कम तौलना 4. जालसाजी और धोखाधड़ी 5. हिंसा और आतंक।

जब देव और असूर का धरातल पर स्पष्ट विभाजन हुआ तो उस समय पूरी दुनियां में तेतीस करोड़ देवता रहे होंगे। उस समय असुर कितने थे, यह पता नहीं। मैं समझता हूँ कि यदि कुरान या बाइबिल को मानकर वेदों को मान्य न करने वाले भी इन पांच गुणों का अक्षरशः पालन करते है तो उन्हें असुर या राक्षस नहीं कहा जा सकता। वेदों का मानना एक गुण हो सकता है और न मानना अवगुण किन्तु वेदों का न मानना कोई दुर्गुण नहीं कहा जा सकता।

मैं आर्य हूँ। आर्य समाज से भी मेरी लगभग पूरी सहमति है। स्वामी दयानंद की अधिकांश बातों को भी गंभीरता पूर्वक विचारणीय मानता हूँ। स्वामी जी ने तीन चार महत्वपूर्ण बातें कही। 1. वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। उसे पढ़ना पढ़ाना सभी आर्यो का परम धर्म है। 2. सत्य को ग्रहण करने तथा असत्य को छोड़ने के लिये

सदा तैयार रहना चाहिये। 3. व्यक्ति को व्यक्तिगत मामले में निर्णय की पूरी स्वतंत्रता होनी चाहिये तथा सामाजिक मामलों में निर्णय करने में उसे पूरी तरह परतंत्र होना चाहिये। मैं स्वामी जी की दो बातों को अक्षरशः स्वीकार करता हूँ तथा पहली बात का इतना ही अंश मानता हूँ कि मै आर्य होने के नाते वेदो को सत्य पुस्तक के रूप मे स्वीकार करू। किन्तु यदि कोई दूसरा वेद को सत्य नहीं मानता है तो स्वामी जी के अनुसार मैं उनके साथ वार्तालाप कर सकता हूँ। किन्तु उसे वेदो को सत्य मानने के लिये मजबूर नहीं कर सकता तब तक जबतक वह मुझे वेदों को असत्य मानने के लिये मजबूर न करता हो।

मै मूर्तिपूजा नहीं करता। क्योंकि मुझे उस पर विश्वास नहीं है। किन्तु मै मूर्तिपूजा का विरोध भी नहीं करता। क्योंकि कर्म अकर्म और विकर्म की तुलना की जाये तो मूर्तिपूजा अकर्म है, विकर्म नहीं। जब स्वामी जी अपने विचार दे रहे थे, उस समय विकर्म अर्थात समाज विरोधी तत्वों का मनोबल टूटा हुआ था, और उस समय विकर्म का विरोध उनकी प्राथमिकता नहीं थी। स्वामी जी के बाद आज दुष्ट प्रवृत्तियां मजबूत हो रही है और हम तुष्ट प्रवृत्तियों अर्थात विकर्म से टकराने की जगह अकर्म का विरोध कर रहे है। यह समय ऐसा है कि यदि विकर्म को रोकने के लिये अकर्म करने वालो को साथ भी लेकर चलना पड़े तो हम आर्यो का कर्तव्य है कि हम ऐसा करे।

आपने शास्त्रार्थ को प्रश्रय देने की बात की। मैं उससे सहमत नहीं । शास्त्रार्थ उन लोगों के बीच होता है जिसके दोनों पक्ष एक समान शास्त्रों पर विश्वास करते हो किन्तु यदि शास्त्र ही भिन्न–भिन्न हो तो शास्त्रार्थ का आधार क्या है? क्या शास्त्रार्थ शब्द की जगह विचार मंथन शब्द स्थापित करना ठीक नहीं रहेगा? आपने तटस्थ निष्पक्ष निरपेक्ष निर्लिप्त की परिभाषाएं की है। मैं देख रहा हूँ कि मेरे प्रश्न करने के बाद भी आप अकेले व्यक्ति है जिन्होंने इन शब्दों पर विचार मंथन करने का प्रयत्न किया। इसके लिये मैं आपका आभारी हूँ।

आपने गौ हत्या करने वाले को शीशे की गोली से मार डालने का वेदों में आदेश बताया है। यदि ऐसा कोई आदेश है तो मैं उसमे सहमत नहीं। यदि कुरान मे भी ऐसा कोई आदेश हो कि इस निंदा करने वाले को फांसी दे दी जाये तो मैं कुरान के उस आदेश को भी अस्वीकार करता हूँ। समाज को किसी भी मामले मे व्यवस्था अनुसार ही दंड देने की स्वतंत्रता रही है। वह भी सिर्फ 5 मामलों में। यदि किसी व्यक्ति ने किसी सामाजिक नियम को तोड़ा तो उसका बहिष्कार तक ही किया जा सकता था, दंड नहीं दिया जा सकता क्योंकि दंड देने का काम शासन का है समाज का नहीं।

आपने यू.एन.ओ. की भूमिका लिखी। मैं इसे बढ़ाकर विश्व सरकार की भूमिका तक ले जाना चाहता हूँ। मेरे दिमाग में विश्व सरकार बनाने की एक कल्पना है कि पूरी दुनियां के लिये मतदान द्वारा एक हजार व्यक्तियों का चयन किया जाये। यह चयन एक व्यक्ति एक मत के आधार पर हो। ये एक हजार लोग विश्व सरकार का प्रतिनिधित्व करें। ये एक हजार लोग एक विश्व का संविधान बना ले और उस संविधान के अनुसार विश्व के सभी देशों को न्याय और सुरक्षा की गारंटी दी जाये या साथ में आवश्यकता अनुसार किसी मामले पर मजबूर भी किया जाये। न्याय और सुरक्षा को छोड़कर अन्य मामलों में विश्व व्यवस्था हस्तक्षेप न करें।

## मूल अधिकारों के नाम पर सत्ता संघर्ष–

नरेन्द्र सिंह, बुलंदशहर,उ0प्र0, फोन नं0 9012432074

तत्काल में बंगाल व केरल सहित देश के पॉच राज्यों में विधान सभा चुनाव की घोषणा हुई है। इस घोषणा से पहले चुनावी समीपता को देखते हुए देश में दलित व मूल अधिकारों के अस्तित्व को लेकर बडा राजनीतिक घमासान हुआ जो अभी तक चल रहा है। इस संघर्ष के होने का मुझे बड़ा सरल कारण समझ में आया कि देश में सन 2014 के आम चुनाव में जो जनमत नरेन्द्र मोदी के पक्ष में गया है वह वैचारिक दृष्टिकोण से खण्डित किया जाए। क्योंकि इस जनमत में दलित व तटस्थ भूमिका में अवसर के अनुसार रहने वाले समाज की भीड़ ने भी अधिकतर मोदी के पक्ष में मतदान किया था! इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए 2014 के आम चुनाव के बाद दिल्ली व बिहार के रास्ते सफलता पाने वाले विपक्ष का सत्ता संघर्ष तत्काल के विधान सभा चुनाव पर निगाह गडाए बैठा है। यदि समीक्षा की दृष्टि से देखा जाए तो हमारी चुनावी राजनीति के अनुसार विभिन्न राजनीतिक संगठनों के बीच होने वाला सत्ता संघर्ष सहज प्रक्रिया है जो होगा ही। नरेन्द्र मोदी के बल बूते भाजपा के केन्द्र में सत्ता पाने के

बाद दिल्ली और बिहार में चुनावी हार देश में लोकतन्त्र की पुष्टता के लिए सुखद एहसास था क्योंकि आम चुनाव के बाद महाराष्ट्र का चुनाव और वहां सरकार निर्माण की स्थिति को देखते हुए सत्ता संघर्ष के लिए भाजपा का प्रयास अतिरेक प्रदर्शित करने वाला था। लेकिन यह भी सच है कि महाराष्ट्र का घटना सहित बिहार तक के चुनावी संघर्ष ने देश में किसी ऐसी बहस को जन्म नहीं दिया जो उग्र वैचारिक अतिशयवाद पर केन्द्रित हो, परिभाषा शब्द के सिद्धान्त के विरूद्ध हो और आम आदमी के मानसिक सन्तुलन को अतिशय आघात पहुॅचाती हो। किन्तु तत्काल में मूल अधिकारों के नाम पर सत्ता के हबशियों ने किसी विषय की उत्पत्ति, विस्तार और प्रयोग के सिद्धान्त को ठुकरा कर देश में एक अचरज भरी प्रदूषित बहस को जन्म दिया है। यह बहस इसलिए अतिशय रूप से घातक है कि दुनियां का राजनीतिक प्रबन्ध वैश्विक समाज को समाज की परिभाषा के अनुसार निर्मित होने वाले ढॉचे में नहीं ढलने दे रहा है। व्यक्ति, वर्ग संघर्ष में उलझा हुआ है और राष्ट्रीय, साम्प्रदायिक क्षे़त्रीय, भाषाई जैसे निजता के विषयों को महत्व देने के कारण व्यक्ति को समाज के रूप में स्थापित नहीं होने दे रहे हैं। समाज के वैश्विक परिदृश्य को देखें तो राष्ट्रीय अस्मिता का विषय समाज की तुलना में बहुत महत्व का विषय बना हुआ है। वर्तमान में भारत में तथाकथित राष्ट्रवादियों की सरकार के निर्माण के बीच यूॅ तो पूरा विपक्ष सत्ता से अपनी बेदखली का गम और उसे पाने की लालसा को भुला नहीं पा रहा है ताकि वह इसे प्राप्ति की कोई रणनीति बना सके। तत्काल में इस संघर्ष को मजबूत करने के लिए वामपंथियों के नेतृत्व में सम्पूर्ण विपक्ष ने समाज के उन वर्गो के मूल अधिकारों के हनन का बवंडर खड़ा किया है जिनके निर्माण के सिद्धान्तों में व्यक्ति के मूल अधिकारों की कल्पना तक नहीं की गई है, जिनकी संस्कृति में मौलिक स्वतन्त्रता का पुट तक नहीं है। इस विषय को स्पष्ट करने लिए समाज के ऐसे वर्गो की संस्कृति की चर्चा तथा व्यक्ति को प्राप्त मूल अधिकारों के गुण धर्म पर विचार करना होगा। वस्तुतः जीवन प्रकृति प्रदत्त है। इस पर किसी राज्य व्यवस्था के नियन्त्रण का कोई प्रश्न ही नहीं पैदा होता है! इसलिए व्यक्ति को प्राप्त मूल (प्राकृतिक) अधिकार उसे किसी मानवकृत व्यवस्था द्वारा प्राप्त नहीं कराए जाते बल्कि वे उसे प्रकृति प्रदत्त होते हैं। क्योंकि व्यवस्था का तमाम ढॉचा व्यक्ति के सन्दर्भ में बना है इसलिए यहॉ पर हम अन्य जीवन चक्र की चर्चा नहीं करेंगे। मैंने कहा है कि मूल अधिकार व्यक्ति के होते हैं वे किसी व्यक्ति समूह के नहीं होते। क्योंकि व्यक्तियों का कोई समूह यदि व्यक्ति के मूल अधिकारों की आड़ में अपनी बात कहता है तो वर्ग संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो जाती है और उस स्थिति में राज्य, समाज को अराजक घोषित करके व्यवस्था के नाम पर सहजता से व्यक्ति के मूल अधिकारो का हनन कर लेता है। मूल अधिकारों के विषय में राज्य व्यवस्था व्यक्ति को उनकी सुरक्षा की गारंटी देती है। मनुष्य कृत लोकतान्त्रिक व्यवस्थाओं में भी अक्सर यह दोष पाया जाता है कि ये व्यवस्थाएं भी जीवन के प्राकृतिक अधिकारिता के क्षेत्र में हस्तक्षेप करती है और व्यक्ति को मूल अधिकार प्रदान करने का दावा करती है। भारत की संवैधानिक व्यवस्था का यह भी एक दोष है। हमारे संविधान विशेषज्ञ भी अक्सर मूल अधिकारों की विवेचना के विषय में प्रकृति द्वारा निर्धारित सीमाओं को पार कर जाते हैं और सरकारों का तो इस विषय में कार्य करने का कोई जवाब ही नहीं दिया जा सकता है! जैसे सरकार ने संविधान से सम्पत्ति के मूल अधिकार का लोप कर दिया और शिक्षा को मूल अधिकार घोषित कर दिया। किसी विषय की वृत्ति को बिना समझे उसकी प्रकृति को दरकिनार कर जब मनुष्य कार्य करता है तो निर्धारित व्यवस्था में अव्यवस्था का उत्पन्न होना निश्चित हो जाता है। व्यक्ति को प्राप्त मूल अधिकार राज्य व्यवस्था के निर्माण का अर्थ सिद्ध करते हैं, जीवन में राज्य व्यवस्था का हस्तक्षेप कहां तक हो सकता है यह मूल अधिकारों के प्रकार को जानकर ही तय किया जा सकता है। वस्तुतः मूल अधिकार केवल चार होते है जिनमे पहला है जीवन का, दूसरा स्वनिर्णय का, तीसरा अभिव्यक्ति का और चौथा सम्पत्ति का। व्यक्ति

के लिए ये चार विषय मूल अधिकार की श्रेणी में क्यों आते हैं इसका सूक्ष्म उत्तर यह है कि ये विषय जीवन की स्वतन्त्रता की निर्बाधता के लिए आवश्यक है। जीवन में इन विषयों पर किसी भी प्रकार का बन्धन जीवन पर प्रकृति की प्राकृतिक स्वतन्त्रता का हरण कर लेता है। इस विषय मे यहॉ पर यह तर्क भी प्रस्तुत कर देना उचित होगा कि व्यक्ति अपने प्राकृतिक स्वभाव से एक सामाजिक प्राणी है क्योंकि परस्पर आवश्यकता पूर्ति का सिद्धान्त उसके जीवन में सामाजिक ढॉचे का निर्माण करता है। इसलिए मूल अधिकार व्यक्ति को निरंकुश नहीं बनाते। व्यक्ति यदि नितान्त अकेला है जोकि वह कभी हो नहीं सकता है तो उसके मूल अधिकारों की सीमा तय नहीं की जा सकती है या तब उसकी आवश्यकता भी नहीं होगी। इसलिए व्यक्ति के मूल अधिकारों की परिभाषा यह है कि व्यक्ति के मूल अधिकारों में राज्य या अन्य कोई भी तब तक हस्तक्षेप नहीं कर सकता है जब तक उसने किसी अन्य के वैसे ही अधिकारों में कोई हस्तक्षेप न किया हो। यदि कहीं पर ऐसा होता है तो लोकतन्त्र में समाजकृत राज्य की दण्ड व्यवस्था को अपना कार्य करना चाहिए। इसके लिए समाज के किसी वर्ग को भी ऐसा वातावरण बनाने की छूट नहीं दी जा सकती है जिससे समाज के निरपेक्ष ढॉचे को हानि पहुॅचे। भारत में गत दिनों में ऐसा ही हुआ है और हो रहा है। भारतीय राज्य व्यवस्था में सत्ता के विपक्षी राजनीतिक संगठन नीतिहीन और समाज विरोधी राजनीति करते हैं और सत्ता पक्ष भी अवसर का लाभ उठाने में लगा रहता है। सत्ता के पक्ष और विपक्ष दोनों ध्रुव विषयों की प्रकृति को बिना समझे समाज के सामने हल्ला मचाते हैं जिसका कोई सुखद परिणाम समाज के लिए नहीं आता है। बस एक भटकाव पैदा होता है और समाज की उर्जा व्यर्थ में नष्ट होती रहती है। भारत में वर्तमान में ऐसा ही हो रहा है। सत्ता पक्ष राष्ट्रवाद के अतिरेक द्वारा देश की सत्ता पर अपना दावा पुख्ता कर रहा है और कॉग्रेस सहित पूरा विपक्ष समाज के अधिकारों की दुहाई देकर सत्ता हांसिल करना चाहता है! आजादी के बाद के समय का यदि अध्ययन किया जाता है तो यह समझ में नहीं आ रहा है कि आजादी के आंदोलन में गांधी दर्शन के आधार पर संघर्ष करने वाली कॉग्रेस अब वामपंथ जैसे दरिद्र विचार का सहारा लेकर सत्ता संघर्ष क्यो कर रही है, क्या उसकी कोई अपनी वैचारिक संस्कृति नहीं है! इस परिप्रेक्ष्य को समझते हैं तो समय देश के अधिकांश क्षेत्र की जनता का मानस राष्ट्रवाद की पैरोकारी के कारण सत्ता पक्ष की ओर झुका हुआ प्रतीत होता है किन्तु भांति–भांति की विचारधारा और लालच का पेट भरने वाला विपक्ष तो उन क्षेत्रों की चुनावी राजनीति में सफलता पाने का प्रबन्ध कर रहा है जहॉ आजादी के बाद राष्ट्रवाद के कथित प्रारूप का प्रभाव कभी कायम नहीं हो पाया है। यह इस लिहाज से और भी हैरतंगेज और कमाल का राजनीतिक तमाशा सिद्ध हो जाता है जब जातिगत और साम्प्रदायिक धड़ो का राजनीतिक दोहन करने के लिए विपक्ष मूल अधिकारों के संरक्षण की राजनीति करता है और समाज के उन दो वर्गो को इस विषय में उकसाने में सफल रहा है जिनके निर्माण के आधारभूत ढॉचे में भी व्यक्ति के मूल अधिकारों की कल्पना तक नहीं की गई है। अपने इस उद्देश्य मे सफल होने के लिए भारत में कॉग्रेस, वामपंथ और इस्लाम दलित राजनीति को उकसाने का भरपूर प्रयत्न कर रहे हैं। यहॉ पर मुझे यह घोषणा करने में कोई हर्ज महसूस नहीं हो रहा है कि आजादी के बाद कॉग्रेस के पास कोई ऐसी विचारधारा बची नहीं हैं जो लोकतन्त्र को पुष्ट बनाती हो अन्यथा आज देश में उस भाजपा का शासन क्यों होता जिसे कॉग्रेस, वामपंथ और इस्लाम असहिष्णु और रूढ संगठन बताकर अस्तित्व नकारने का प्रयास करते रहे हैं। मूलत कॉग्रेस की सत्ता प्राप्ति की महत्वाकांक्षा अन्य विचारों के अस्तित्व को कभी बौना नहीं बना सकती। इसलिए कॉग्रेस वामपंथ की चाकरी करती है लेकिन यहॉ भी स्थिति उलटी केवल भारत में ही नहीं बल्कि समाज के वैश्विक ढॉचे में वामपंथ और इस्लाम में व्यक्ति के मूल अधिकारों की परिकल्पना ही नहीं की गई है। क्योंकि दुनियां हमारे सामने है। वामपंथ की संस्कृति यह सिद्ध करती है कि इस विचार धारा के नायक राज्य

के रूप में स्थापित होकर समाज की स्वतन्त्रता और व्यक्ति के मूल अधिकारों का भक्षण करते हैं। वामपंथ के इतिहास की समीक्षा के साथ दुनियां में शेष बचे वामपंथ के अवशेष के रूप में चीन इस बात का प्रबल उदाहरण है। वामपंथ में राज्य न व्यक्ति को स्वीकार करता है और न धर्म को और सबसे महत्वपूर्ण तो यह बात है कि सत्ता केन्द्र विपक्ष की भूमिका को ही नकार देता है। भारत में ऐसी सत्ता कायम करने का सपना देखने वाले लोग आज व्यक्ति के मूल अधिकारों के बड़े हिमायती बन बैठे हैं। क्या ऐसे लोगों की मंशा को एक समीक्षक लालच के दृष्टिकोण के रूप में न देखे! दूसरी ओर इस्लाम के अनुयाईयों को भी भारत में अपने मूल अधिकारों की सुरक्षा की चिन्ता खाए जा रही है। जबकि समीक्षा यह सिद्ध करती है कि इस्लाम में व्यक्ति, समाज और राज्य, धर्म में निहित है। वहाँ धर्म सर्वोपरि है। मूल अधिकारों की प्राप्ति का तो प्रश्न ही नहीं है। वर्तमान में यह गम्भीर रहस्य उजागर नहीं हो पा रहा है कि वामपंथ और इस्लाम को केवल भारत में ही अपने मूल अधिकारों की चिन्ता क्यों खाए जा रही है। जबकि इन विचार धाराओं को मानने वाले लोगों को अपनी गतिविधियों से आने वाले परिणाम के अतिरिक्त भारतीय समाज व राज्य से कभी भी कोई खतरा उत्पन्न नहीं हुआ है, चाहे सत्ता किसी भी विचार के लोगों के पास रही हो। भारत में राष्ट्रीय अस्मिता का विरोध तथा सत्ता संघर्ष का कोई भी अवसर वामपंथ और इस्लाम को प्रगतिशीलता की ओर अग्रसर कर देता है जोकि उनकी सांस्कृतिक संरचना में निहित ही नहीं है। मैं इस्लाम व वामपंथ के सामने यह चुनोती पेश करता हूँ कि क्या इस विचार धारा को मानने वाले लोग अपनी राज्य व्यवस्था के प्रकार में व्यक्ति के मूल अधिकारों की सुरक्षा की गांरटी दे सकते है, क्योंकि ऐसा हुआ तो यह निश्चित है कि तब राज्य व्यवस्था में समान नागरिक संहिता को अवश्य लागू किया जाएगा जिसके परिणाम स्वरूप इस्लाम व वामपंथ अपने कठोर सांगठनिक ढॉचे में या तो परिवर्तन करेंगे अन्यथा विनाश को प्राप्त हो जाएगे। मैं इस विवेचना में तथाकथित प्रगतिशीलता के निकृष्ट झण्डा बरदारों का नाम तो नहीं लेना चाहता लेकिन उदाहरण के लिए कहूँ तो राज्य द्वारा पोषित शिक्षण संस्थानों में जनता के पैसे से ऐश करने वाले कन्हैया और उमर खालिद जैसे लोग वामपंथ और साम्प्रदायिक धर्म के हाथों के झुन्झुने बने हुए हैं। ऐसे लोग जिन सांस्कृतिक व धार्मिक विचारधाराओं के अनुयाई है पहले उन सांस्कृतिक विचारधाराओं से तो अपने मूल अधिकार प्राप्त कर लें, उनसे अपनी व समाज के अन्य वर्गो की अभिव्यक्ति का अधिकार प्राप्त कर लें। एक भारतीय होने के नाते इतना तो मै भी दावा कर सकता हूँ कि भारत कभी भी किसी व्यक्ति के मूल अधिकारों का हनन नहीं करेगा जब तक कि उस व्यक्ति ने अन्यों के वैसे ही अधिकारों में हस्तक्षेप न किया हो! कृपया भारत के लोग इसे समझे, यह सत्ता संघर्ष भारत के विनाश के लिए है। तभी तो वामपंथ की ओर झुकी हुई तथाकथित प्रगतिशीलता वादियों की दिल्ली सरकार की जॉच समिति चंदरोज में ही कन्हैया की दोष मुक्ति की जॉच पूरी कर देती है जबकि जेएनयू छात्र मण्डल में कन्हैया को प्राप्त पद के अनुसार वहां हुई गतिविधियों में उसकी संलिप्तता को नकारा नहीं जा सकता है, ऐसा नहीं है कि हर अपराध करके ही सिद्ध होता हो, व्यक्ति योजनाकार के रूप में भी आपराधिक कार्यो में शामिल होता है। इस प्रकरण ने तथाकथित राष्ट्रवादियों को भी अपने कार्य के प्रति गम्भीर दिखते रहने के स्वांग से मुक्त होने का अवसर दिया है। वाह! नेताओं का क्या खूब चुनावी प्रबन्ध है। सत्ता प्राप्ति के लिए इतना फूहड तमाश केवल भारत में ही सकता है, मुझे विश्वास है दुनियां में कहीं और तो ऐसा कभी नहीं हो सकेगा ! क्या भारत की जनता कभी इस निकृष्ट स्वांग से मुक्ति पाने का प्रयास करेगी ?

# आठ मार्च अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस

आठ मार्च अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस था। इस समय हमारे परिवार में कुल तेरह सदस्य हैं। सबने एक साथ बैठकर अपने परिवार के निम्नलिखित आंतरिक नियम बनाये—

1 नामः— कांवटिया परिवार एक होगा।

2 कानूनी मान्यताः— परिवार पंजीकृत होगा।

3 समानताः—परिवार की सम्पत्ति संयुक्त होगी। प्रत्येक सदस्य को सम्पत्ति में अलग होते समय समान हिस्सा मिलेगा। परिवार का कोई सदस्य परिवार में रहते हुए परिवार की अनुमति के बिना कोई सम्पत्ति या व्यवस्था पृथक नहीं कर सकेगा। ऐसी पृथक सम्पत्ति भी किसी विभाजन के समय परिवार की संयुक्त सम्पत्ति में शामिल मानी जायेगी।

4 व्यवस्थाः—1. परिवार का एक प्रमुख होगा जो परिवार में सबसे अधिक उम्र का व्यक्ति होगा।

2. परिवार प्रमुख परिवार के सदस्यों की सहमति से एक परिवार का व्यवस्थापक नियुक्त करेगा।

3. परिवार का कोई भी सदस्य कभी भी अपना हिस्सा लेकर अथवा परिवार कभी भी उसे अपना हिस्सा देकर अलग हो या कर सकता है।

4. आठ वर्ष से कम उम्र का बालक अलग होता है, या किया जाता है तो पंजीकरण अधिकारी की स्वीकृति आवश्यक होगी।

5. अन्य सभी विषयों पर परिवार के लोग मिलकर आंतरिक नियम बना सकते हैं।

समीक्षाः— इस व्यवस्था का उद्देश्य यह है कि परिवार में कानून का हस्तक्षेप कम हो। महिलाओं को भी सम्पत्ति तथा व्यवस्था में समान अधिकार मिले। परिवार के आंतरिक संबंधो में कानून का हस्तक्षेप न हो। इसका अर्थ हुआ कि कानून की दृष्टि में परिवार में रहते हुए न कोई माता—पिता होगा, न कोई भाई बहन, न पति पत्नी। ये सारे रिश्ते परिवार के आंतरिक होंगे। कानून की नजर में सब या तो एक व्यक्ति होंगे अथवा एक परिवार के एक सदस्य। लड़की ससुराल जाते समय अपना हिस्सा लेकर जायेगी और बहू या बालक जन्म लेते ही परिवार की सम्पत्ति में बराबर के हिस्सेदार हो जायेंगे। यह नई व्यवस्था हमारे परिवार में आज से ही लागू हो गई है। शीघ्र ही इसे कानूनी मान्यता भी मिल जायेगी। परिवार के किसी सदस्य की परिवार से अलग होने के पूर्व मृत्यु होती है तो उसका हिस्सा अपने आप परिवार में ही रह जायेगा। अर्थात् कोई व्यक्ति परिवार में रहते हुए किसी सम्पत्ति पर कोई दावा नहीं रख सकेगा। यदि किसी का कोई प्रश्न हो, या सुझाव हो तो भेज सकते हैं।

दिलीप सिंह मृदुल, फेस बुक से

प्रश्न—पंजीकरण अधिकारी कौन होगा? आपने अवयस्क को भी पूर्ण नागरिकता दी है, जबकि 16 से 18 साल की आयु में ही मस्तिष्क पूर्ण विकसित होता है। क्या आठ साल के अवयस्क को पूर्ण सदस्य मानना उचित है? क्या सभी सदस्यों का परिवार की सभी तरह की सम्पत्ति पर पूर्ण और समान अधिकार एक भावावेशी निर्णय नहीं है? जबकि एक 18 साल के वयस्क की कोई भी भूमिका परिवार की सम्पत्ति की वृद्धि में नहीं रही, उलट उस पर परिवार की सम्पत्ति का काफी हिस्सा खर्च किया गया है। अब यदि वह अपना हिस्सा लेकर अलग हो जाये तो यह परिवार के अन्य सदस्यों का शोषण और अन्याय होगा।

उत्तर—पंजीकरण के लिये अधिकारी तथा प्रक्रिया तो वही होगी जो अभी सरकार की तरफ से होता है। वकील लोग तय कर रहे है कि यह दस्तावेज किस कानून के अंतर्गत पंजीकृत होगा।

2 यदि कोई अवयस्क परिवार का अनुशासन न माने या परिवार न माने तब अभी कोई हल नही है। या तो हत्या या आत्महत्या होती है या मुकदमे बाजी। मस्तिष्क किस उम्र मे विकसित होता है यह उसे या परिवार को तय करने दीजिये । हम बालक को जन्म लेते ही उसे मौलिक अधिकार सौप देते है तो उसे आठ वर्ष बाद ही निर्णय की स्वतंत्रता देना गलत नही।

3 यदि परिवार समझता है कि बच्चा भविष्य मे बोझ बनेगा तो वह प्रारंभ मे ही उसका हिस्सा देकर अलग कर सकता है। रजिस्ट्रार उसकी व्यवस्था करायेगा। कमाई सिर्फ परिश्रम से ही नहीं होती बल्कि भाग्य भी जुडता है। बच्चे का भाग्य भी आपके साथ है। परिवार सिर्फ सम्पत्ति तक ही सीमित नहीं है बल्कि सहजीवन की पहली पाठशाला भी है। उसका अलग होना परिवार का शोषण हो सकता है इसलिये बच्चे पैदा करने के पूर्व ठीक से सोचिये अन्यथा खतरा उठाने को तैयार रहिये। यदि बच्चे का जन्म होगा तो खतरे भी उठाने होंगे और यह भी हो सकता है कि वृद्धावस्था मे वही बालक आपका सहारा बने।

व्यवस्था परिवर्तन अभियान से जुडने के लिए नीचे दिए
चलभाष अंक व ईमेल पर संपर्क करे।
मिस्ड कॉल नंबर–8287 544 441
संपर्क सूत्रः– 8826290511, 9821012002
ईमेलः–vyvasthapak@rediffmail.com